सामाजिक सौन्दर्यबोध के समालोचक : रामविलास शर्मा

डॉ0 प्रियंका मिश्र

हिन्दी साहित्य के प्रखर आलोचकों की श्रेणी में आचार्य शुक्ल के बाद रामविलास शर्मा एक ऐसे आलोचक के रूप में प्रतिष्ठित हुए जिन्होंने साहित्य की परम्परागत आलोचना के स्थान पर भाषा, साहित्य और समाज को एक साथ रखकर आलोचना का एक नया सौन्दर्यबोध प्रदान किया। उनकी विचार शक्ति का केन्द्र केवल साहित्य नहीं रहा बल्कि समाज और भाषा भी रहे।

रचना की शास्त्रीय या साहित्यिक श्रेष्ठता ही उनकी आलोचना का पैमाना नहीं रहा वरन् वे उसके सामाजिक अवदान को केन्द्र में रखकर उसके औत्कर्ष्य की पहचान करने वाले आलोचक रहे इसीलिए वे सही मायनों में सामाजिक सौन्दर्यबोध के आलोचक हैं।

वास्तव में साहित्य–समीक्षा के क्षेत्रा में विभिन्न आलोचना प(तियाँ अपनी सार्थक भूमिका निभा रही हैं किन्तु उन आलोचना प(तियों की व्यावहारिकता के आलोक में देखा जाए तो अध्किांश का दृष्टिकोण सि(ान्त, इतिहास, व्यवहार, भाषा आदि विभिन्न इकाइयों में से किसी एक पर ही केन्द्रित रहता है। लेकिन आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने प्रत्येक रचना को लोकमंगल की अवधरणा के साथ सम्बध किया है। इसीलिए उनकी आलोचना प(ति सि(ान्त–निरुपणता के साथ–साथ लोक, समाज और मूल्यों को साथ लेकर चलती है।

प्रगतिशील साहित्य के दौर में रामविलास शर्मा ने आरम्भ में मार्क्सवादी दृष्टि से भारतीय संदर्भों का मूल्यांकन किया। वह समय अंग्रेज़ी साम्राज्यवाद का था और समाज के सभी लोगों का संघर्ष सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनीतिक स्तरों पर समानान्तर रूप से चल रहा था। उस समय के साहित्यकार आलोचकों की भूमिका में भी सक्रिय थे। लेकिन सामाजिक–ढाँचे पर पूँजीवादियों और साम्राज्यवादी शक्तियों के नियंत्राण के चलते साहित्यकारों के मध्य वैचारिक संघर्ष तेज़ हुआ और बदलते हुए परिवेश के साथ–साथ आलोचना ने भी परम्परागत पैटर्न के स्वीकार–अस्वीकार के द्वंद्व के बीच एक नया रूप धरण किया। ऐसे ही समय में रामविलास शर्मा ने अपनी आलोचना में परम्परा के भीतर से ही प्रगतिशील मूल्यों की सापेक्षता पर दृष्टि रखते हुए व्यवस्थित आलोचना को अपना आधर बनाया। उनकी इस आलोचना प(ति की मूल दृष्टि आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की आलोचना प(ति पर ही केन्द्रित थी किन्तु अपनी नवीन चिन्तन दृष्टि से उन्होंने तत्कालीन आलोचना के नयी दिशा प्रदान की। प्रसि(आलोचक कमला प्रसाद का मत है कि फअपनी चिन्तन–प(ति में उन्होंने ;रामविलास शर्मा नेद्ध भारतीय इतिहास और संस्कृति की गतिशील प्रकृति को हासिल किया, विश्वबोध के साथ उसकी संगति खोजी और समकालीन चुनौतियों को रेखांकित किया। पूरे विश्व पफलक के बीच उन्होंने अपने जातीय प्रकृत–पथ को विकसित किया है। इसी का परिणाम है कि आज वे भारतीय बु(िजीवियों के बीच मार्क्सवादी विचारक, भाषाविद, समाजशास्त्री, सौन्दर्यतत्वेत्ता और आधुनिकता–बोध से युक्त सर्वाध्कि लोकप्रिय व्यक्ति हैं।"[1]

जहाँ तक रामविलास शर्मा की आलोचना–प(ति का प्रश्न है तो यह स्पष्ट है कि उनकी आलोचना समाज, इतिहास और परम्परा के आलोक में ही रचना का मूल्यांकन करती है

क्योंकि वे स्वयं इस मत को स्वीकार करते थे कि वर्तमान समाज की पहचान उसके अतीत से सम्बध है। वे कहते हैं – " अतीत का वैज्ञानिक, वस्तुपरक विवेचन वर्तमान समाज के पुनर्गठन के प्रश्न से जुड़ा हुआ है।"[2] उन्होंने भारतीय संस्कृति का विशिष्ट अध्ययन किया है। वे यह भी स्वीकार करते हैं कि भारतीय संस्कृति ने यूरोप और पश्चिम एशिया की सांस्कृतिक संरचना को भीतर तक प्रभावित किया है। उनका मानना था कि साहित्य का सौन्दर्यशास्त्रा मनुष्य जीवन की सौन्दर्य की व्याख्या के बिना अपूर्ण है। इसलिए वे साहित्यिक आलोचना को समाज, इतिहास, जाति, भाषा और प्रकृति से भिन्न नहीं देखते। इतिहास की कंदराओं में मानव–जाति के उत्थान के बिन्दु विद्यमान होते हैं। उन्हीं से ही सामाजिक–परम्पराओं और मूल्यों का निर्माण होता है। साहित्य उन मूल्यों के विकास की यात्राा है, सृष्टि है। इसीलिए आलोचक का यह दायित्व बनता है कि वह रचना में विद्यमान सामाजिक मूल्यों का विवेचन करे। इसीलिए रामविलास शर्मा की आलोचना मानव–समाज में व्याप्त सौन्दर्य को साहित्य के भीतर खोजती दिखायी देती है। अपने समय की सर्जना से सीध टकराना ही आलोचना का विशिष्ट धर्म होता है। रामविलास शर्मा की एक विशेष पहचान इस बात को लेकर भी रही है कि वे अपने समय की सर्जनाओं से टकराते हुए ही अपनी आलोचना को निरन्तर नयी दृष्टि देते रहे। उनका मानना था कि जो प्रवृत्तियाँ यथार्थ की विरोधि होती है उनका खण्डन आवश्यक होता है। इसीलिए वे निरन्तर अपनी और पूर्व स्थापित मान्यताओं को चुनौती देते हुए नयी मान्यताओं को स्थापित करते हैं। प्रो. शम्भुनाथ सिंह इस सम्बन्ध में अपना मत व्यक्त करते हुए लिखते हैं - फरामविलास शर्मा का समाज वैज्ञानिक हस्तक्षेप जो बीसवीं सदी के अंतिम दो दशकों में कापफी बढ़ गया था, कईयों को अनावश्यक लगे। क्योंकि इतिहास, समाजशास्त्रा, समाजी–भाषा विज्ञान, राजनीतिक दर्शन, अर्थशास्त्रा इतने सारे अनुशासनों में वे बहुस्वीकृत धरणाओं को चुनौती देते हैं। दरअसल आलोचना का यही काम है।

आलोचना लिखने का अर्थ सर्वमान्य धरणा तैयार करना नहीं है बल्कि प्रचलित धरणा को चुनौती देना है। रामविलास शर्मा ने अपनी आलोचना को पश्चिमी समाज विज्ञानों का उपनिवेश नहीं बनने दिया। "[3] रामविलास शर्मा की आलोचना पश्चिमी विचारकों के सि(ान्तों की आधरशिला पर नहीं टिकी थी। बल्कि उन्होंने भारतीय समाज और संस्कृति को उसके ऐतिहासिक वृत्त में देखने का प्रयास किया इसीलिए वे इतिहास की अवधरणाओं को भी सिरे से नकार देते और भाषा की संरचना के नए विचारों को स्थापित करते। उनकी आलोचना सामाजिक सौन्दर्यशास्त्रा की नवीन स्थापना के द्वारा साहित्य और समाज के अन्तर्सम्बन्धें को व्याख्यायित करती है। मार्क्स के द्वंद्वात्मक भौतिकवाद में विश्वास रखने वाले रामविलास शर्मा इस मूलभूत विचार को नकार देते हैं कि सामाजिक मूल्यों की इमारत अर्थतंत्रा पर टिकी होती है। उनके अनुसार, फऊपरी इमारत के कुछ तत्व तेजी से बदलते हैं जैसे राजनीतिक दृष्टिकोण, कुछ बहुत धिरे या क्रमशः बदलते हैं, जैसे मनुष्य का सौन्दर्यबोध। "[4] इसीलिए वे अपनी आलोचना में वेदों, पुराणों की मान्यताओं के साथ–साथ नवजागरण–मूल्यों की निरन्तरता को भी स्वीकार करते हैं।

रामविलास शर्मा की आलोचना का एक महत्त्वपूर्ण बिन्दू उनका भाषायी चिन्तन है। हिन्दी पट्टी के लोगों की सहज भाषा को उन्होंने राष्ट्रीय पुनर्जागरण के लिए उपयोगी माना और हिन्दी की एक नयी भूमिका का निर्माण किया। भारतीय संस्कृति का अमूल्य आधर मानते हुए भाषा के जातीय स्वरूप को मानव–जाति के साथ सम्ब(करते हुए उसे ऐसी विरासत के रूप में देखा जो पूँजीवादी शक्तियों के विरु(बेहतर तरीके से कार्य कर सकती है। इसीलिए वे

साम्राज्यवाद के विरु(इसे संघर्ष की ताकत के रूप में स्थापित करते हैं।

रामविलास शर्मा का सौन्दर्यबोध सबको साथ लेकर चलने की विचार–शक्ति पर केन्द्रित रहा। वे मनुष्य, भाषा, समाज, संस्कृति और साहित्य की संयुक्तता के आधर पर ही अपनी आलोचना के औत्कर्ष्य को स्थापित करते हैं। उनका मत है कि फ्साहित्य के निर्माण में प्रतिभाशाली मनुष्यों की भूमिका निर्णायक है। उसका यह अर्थ नहीं है कि ये मनुष्य जो कुछ करते हैं, वह सब अच्छा–ही–अच्छा होता है या उसके श्रेष्ठ कृतित्व में दोष नहीं होते। कला का पूर्णतः निर्दोष होना भी एक दोष है। ऐसी कला निर्जीव होती है।य5 इसीलिए वे केवल परम्परा और सांस्कृतिक आधरभूमि को ही रचना की आलोचना का विरोध् करते हैं और उसके लिए सचेत मूल्यांकन पर बल देते हैं। उनकी दृष्टि में रचनाओं में सामाजिक निरन्तरा के बीच जड़ता का उचित मूल्यांकन वैचारिक संघर्ष के द्वारा ही सम्भव हो सकता है।

नामवर सिंह 'आलोचना' पत्रिाका के रामविलास शर्मा विशेषांक के सम्पादकीय में लिखते हैं, " डॉ. रामविलास शर्मा अपनी साहित्य साध्ना के सर्वोच्च शिखर पर हैं। जो उनकी सभी मान्यताओं से पूरी तरह सहमत नहीं हैं वे भी यह स्वीकार करेंगे कि डॉ. शर्मा अपने संघर्ष और साध्ना में अप्रतिम हैं। प्रगतिशील आलोचन के अग्रदूत होने के साथ ही वे हिन्दी जाति के प्रतिनिधि समालोचक हैं और इस हैसियत से समूचे भारतीय साहित्य के विकास में उनका योगदान अन्यतम है। उनके संघर्ष और साध्ना हमारे लिए सतत प्रेरणा के स्रोत हैं और अतुलनीय उपलब्धियाँ अभिनन्दनीय हैं। "[6] इस तरह कहा जा सकता है कि रामविलास शर्मा की आलोचना अपने समय और समकालीन साहित्य तथा आलोचना को ही ताकत नहीं देती बल्कि हिन्दी आलोचना में विखण्डन की प्रवृत्ति पर कड़ा प्रहार करते हुए उसके स्वरूप को नया आधर देती है। वे शास्त्रीय सौन्दर्य की बजाए शाश्वत सौन्दर्य के प्रतिमानों को साहित्य के लिए आवश्यक मानते हुए अपने आलोचना कर्म को विस्तार देते हैं। वे लिखते हैं कि "…. उन्हें (रचनाकारों को) यह याद दिलाने की जरूरत है कि सामयिक संघर्ष में आधुनिक साहित्य जितना तपेगा उसका रंग–रूप उतना ही निखरेगा। इस संघर्ष से दूर रहकर लेखक सोने की कलम से भी काल्पनिक सपनों के गीत लिखेगा तो उसकी कलम और साहित्य का मूल्य दो कौड़ी से ज्यादा न होगा।य7 सही मायनों में वे सामाजिक सौन्दर्यबोध् के रचनाकार और आलोचक हैं।

संदर्भ

1. रामविलास शर्मा, पश्चिम एशिया और)ग्वेद
2. कमला प्रसाद, 'भूमिका', हिन्दी की प्रगतिशील आलोचना
3. प्रो. शम्भुनाथ, रामविलास शर्मा होने का अर्थ
4. रामविलास शर्मा, भाषा और समाज
5. रामविलास शर्मा, परम्परा का मूल्यांकन
6. आलोचना, 60–61, जनवरी 1982
7. रामविलास शर्मा, भाषा साहित्य और संस्कृति

Copyright © 2016 *Dr Priyanka Mishra*. This is an open access refereed article distributed under the Creative Common Attribution License which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.